

प्यार का सागर

सुरजीत मान जलईया सिंह

पिछले नौ वर्षों से असम की उस धरती पर रहने का सौभाग्य मिला है, जहाँ प्रकृति केवल दिखाई नहीं देती, बल्कि जीवन के हर स्पर्दन में महसूस होती है। दुलियाजान 'ऑयल नगरी' मेरे लिए अब केवल रहने की जगह नहीं, बल्कि एक ऐसी स्मृति-भूमि बन चुकी है, जहाँ प्रकृति, मनुष्य और संस्कृति एक-दूसरे में घुलते हुए दिखाई देते हैं। यहाँ की हरियाली जितनी मन को बाँधती है, उतना ही यहाँ का सरल, निश्छल और आत्मीय जनजीवन भीतर तक छू जाता है।

असम को समझने के इन वर्षों में मैंने जाना कि इस प्रदेश की पहचान केवल इसकी नदियों, पहाड़ियों, वर्षा और हरियाली से नहीं है। इसकी असली पहचान उसके लोगों के हृदय में बसती है। उनकी भाषा में, उनके लोक-संगीत में, उनकी सांस्कृतिक स्मृतियों में और उन कलाकारों में, जिन्हें वे केवल कलाकार नहीं, अपने परिवार का हिस्सा मानते हैं। और इन्हीं आत्मीय स्मृतियों के केंद्र में हैं जुबिन दा।

बीते वर्ष 20 सितंबर की वह सुबह आज भी स्मृतियों में किसी काले अक्षर की तरह अंकित है। सुबह-सुबह मोबाइल की स्क्रीन पर जब यह अविश्वसनीय समाचार दिखाई दिया कि जुबिन गर्ग अब हमारे बीच नहीं रहे, तो कुछ क्षणों के लिए विश्वास ही नहीं हुआ। लगा, जैसे कोई व्यक्ति नहीं गया। जैसे किसी प्रदेश की आवाज़ अचानक मौन हो गई हो।

मैं मूलतः हिंदीभाषी परिवेश से आया था। असम में रहने के बावजूद स्थानीय कला-जगत और उसके कलाकारों से मेरा परिचय बहुत गहरा नहीं था। लेकिन जुबिन दा के जाने के उस दिन मैंने पहली बार अपनी आँखों से देखा कि किसी कलाकार और उसकी जनता के बीच रिश्ता केवल गीत सुनने-सुनाने का नहीं होता। कभी-कभी कोई कलाकार अपनी कला से आगे निकलकर लोगों की सामूहिक स्मृति, भावनाओं और पहचान का हिस्सा बन जाता है।

सोशल मीडिया पर उमड़ती शोक-संवेदनाएँ, सड़कों और गलियों में पसरा सन्नाटा, अपने प्रिय कलाकार के अंतिम दर्शन के लिए उमड़ा जनसमुद्र और राज्यव्यापी शोक। इन सबने मुझे यह समझने के लिए विवश किया कि जुबिन गर्ग केवल मंच पर गाने वाला एक लोकप्रिय कलाकार नहीं था। वह असम की भावनाओं का स्वर था। उसकी आवाज़ में लोगों को अपना घर सुनाई देता था, अपनी मिट्टी की गंध महसूस होती थी और अपनी सांस्कृतिक पहचान की धड़कन सुनाई देती थी।

यार एक ज़िस्म लिए आ गया हैं हम।

दिल, दिमाग सब तुम्हारे पास छोड़कर।

आज एक वर्ष बाद जब उनकी प्रथम पुण्यतिथि पर पीछे मुड़कर देखता हूँ, तो लगता है कि मृत्यु ने जुबिन दा से उनका शरीर तो छीन लिया,

लेकिन उनकी आवाज़ नहीं छीन सकी। समय बीतता है, चेहरे स्मृतियों में धुँधले पड़ते हैं, आवाज़ें धीरे-धीरे दूर जाती प्रतीत होती हैं; लेकिन कुछ स्वर ऐसे होते हैं जो समय के साथ क्षीण नहीं होते, बल्कि और गहरे उतरते चले जाते हैं। जुबिन दा भी ऐसा ही एक स्वर हैं।

ब्रह्मपुत्र बहती रहेगी। असम की पहाड़ियों पर बादल आते-जाते रहेंगे। चाय-बागानों में हरियाली बनी रहेगी। असम की हवाएँ अपनी गति से चलती रहेंगी। लेकिन इन सबके बीच कहीं न कहीं उनकी आवाज़ भी सुनाई देती रहेगी। कभी किसी गीत की धुन में, कभी किसी अकेले व्यक्ति की आँखों में, कभी किसी उत्सव की भीड़ में और कभी किसी असमिया माँ के स्मरण में।

जुबिन दा और असम की जनता के बीच का संबंध शब्दों में बाँधना कठिन है। यह संबंध किसी औपचारिक लोकप्रियता का परिणाम नहीं था। यह तो उस प्रेम का विस्तार था जिसमें कलाकार और श्रोता के बीच की दूरी समाप्त हो जाती है।

यह प्रेम मुझे भारतीय लोक-स्मृति में बसे उन निष्कलुष संबंधों की याद दिलाता है, जहाँ पाने की आकांक्षा से अधिक समर्पण का भाव होता है। शबरी का राम के प्रति प्रेम, कुब्जा का कृष्ण के प्रति अनुराग और सती का शिव के प्रति समर्पण। जुबिन दा को असम ने केवल सुना नहीं था। 'असम ने उन्हें जिया था।' इसीलिए उनकी अनुपस्थिति में भी उनकी उपस्थिति इतनी गहरी है।

एक वर्ष बीत गया, मगर ऐसा लगता है जैसे वे कहीं गए ही नहीं। वे आज भी किसी रेडियो से आती धुन में हैं, किसी घर में बजते गीत में हैं, किसी युवा के स्वर में हैं, किसी माँ की स्मृति में हैं और सबसे बढ़कर उस मिट्टी में हैं, जिसने उन्हें जन्म दिया और जिसे उन्होंने अपनी आवाज़ से दुनिया तक पहुँचाया।

शायद किसी कलाकार की सबसे बड़ी उपलब्धि यही होती है कि उसका जीवन समाप्त होने के बाद भी उसकी कला लोगों के जीवन में चलती रहती है। जुबिन दा का शरीर पंचतत्व में विलीन हो चुका है, लेकिन उनका स्वर पंचतत्वों से भी आगे निकलकर स्मृति का हिस्सा बन गया है। जनता का प्रेम ही किसी कलाकार का सबसे बड़ा स्मारक होता है। पत्थरों से बने स्मारक समय के साथ पुराने पड़ सकते हैं, लेकिन लोगों के हृदय में बना स्मारक कभी नहीं टूटता। जुबिन दा का वही स्मारक आज भी असम के जन-मन में खड़ा है। और उस स्मारक पर कोई शिलालेख नहीं— वहाँ केवल गीत हैं, स्मृतियाँ हैं और एक अथाह प्रेम है।

प्यार का यह पारावार नापना संभव नहीं। आपका संगीत इस पारावार में सदैव लहराता रहेगा। आपकी आवाज़ आने वाली पीढ़ियों को भी उस असम से परिचित कराती रहेगी, जिसे आपने अपने सुरों में जिया था। आप चले गए, जुबिन दा, लेकिन आपकी आवाज़ नहीं गई। वह ब्रह्मपुत्र की लहरों के साथ बहती रहेगी, असम की हवाओं में घुलती रहेगी, और उन लाखों कंठों में जीवित रहेगी जो आपको आज भी अपने बीच महसूस करते हैं।

जुबिन दा की प्रथम पुण्यतिथि पर

कोटि-कोटि नमन एवं अश्रुपूरित श्रद्धांजलि।